VOL- X | ISSUE- VIII | AUGUST | 2023 | PEER REVIEW e-JOURNAL | IMPACT FACTOR 7.367 | ISSN 2349-638x

यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र'के उपन्यासों में : दलित दारूण गाथा चित्रण

डॉ. नीतू ओझा
अन्त्योदय नगर, बीकानेर (राज.)

लब्धप्रतिष्ठ उपन्यासकार यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' राजस्थान में ही नहीं अपितु समूचे राष्ट्र में अपनी निज पहचान स्थापित की है। अधिशय समीक्षकों ने अनेक औपन्यासिक रचना संसार के बारे में समीक्षात्मक टिप्पणी करते हुए पुनः सामन्ती परक, ग्राम्याचल बोधपरक एवं राजनीतिक परक इत्यादि उपन्यासों से रचियता के रूप में स्वीकारा है। इसी संदर्भ में यहां इस रेखांकित बात का उल्लेख करना चाहती हूँ कि विमर्शों के इस दौर में स्मृति शेष 'चन्द्र' जी ने स्त्री विमर्श पर भी अपनी लेखनी बहुत ही सशक्त रूपेण चलाई है।

हिन्दी साहित्य की लोकप्रिय विद्या उपन्यास को पृथक-पृथक ढंग से विद्ववतजनों ने अपने-अपने तरीकों से परिभाषित किया है। परिभाषा युगधर्म होती है हर युग के साथ परिभाषाओं में परिवर्तन होते रहते हैं। वक्तव्यानुसार उपन्यास के सरलीकृत करके समझने का प्रयास करे तो नितनूतन नवल रहने वाला ''नौवल'' कहलाया। इसी क्रम में यहां इस बात का उल्लेख करना हमारा पुनीत कर्तव्य बनता है कि प्रेमचन्द्रोतर हिन्दी साहित्यक विधाओं में प्रत्येक दशक में क्रांतिकारी परिवर्तन होते आ रहे है। जिसमें हिन्दी साहित्य के अनुरागी भी साक्षी है चाहे कविता हो, कहानी हो, उपन्यास हो, या अन्यान्यतिक विद्याएं हो इन्होंने इन विधाओं को आन्दोलन का रूप भी दिया है जैसे नई कविता, साठोतरी कथा साहित्य, अकहानी, समान्तर कहानी, यथार्थबोध कहानी ..... अतः इन सब से उपन्यास भी अछूता नहीं रह पाया है। यूरोप में विधिवत उपन्यास को लेकर के विधिवत यह घोषणा कर दी थी ''नॉवल इज डेड'' किन्तु साहित्यकारों के पाठकों में मध्य उपन्यास आज भी दिन-प्रतिदिन लोकप्रियता के चरम शिखर को छुता जा रहा है। यह पृथक तथ्य है कि लगभग सातवें दशक के पश्चात् विमर्शों का दौर अत्यधिक रूप से प्रचलन में आता हुआ दृष्टिगोचर हो रहा है। स्त्री विमर्श, विकलांग विमर्श, आदिवासी विमर्श व दलित विमर्श आदि इत्यादि।

अतः हिन्दी साहित्य के रचनाकार अपनी रचनाओं में येन-केन प्रकारेण इन विमर्शों पर आधारितरचनाओं का सृजन करना और उस पर निर्बाध रूप से लेखनी चलाना नहीं चूक रहे हैं। और सही भी है कि अगर साहित्य समाज का दर्पण है तो समुचे समाज का चित्रांकन या बिम्ब उसे प्रतिबिम्ब दृष्टिगत होनी चाहिए। उन रचनाओं में तभी समसामयिकता उद्घाटित होती जा रही है।

जहां तक स्मृतिशेष मासिजीवि रचनाकार 'चन्द्र' जी का प्रश्न है इन्होंने एक शतक से अधिक उपन्यासों की रचना करने का श्रेय प्राप्त किया है।

वैदिक काल से लेकर आधुनिक काल तक दलित वर्ग एवं वंचित वर्ग को लेकर अनेक प्रकार के लेख-लिखे गये हैं। जिस में दलित का अर्थ एवं परिभाषाएं पर विद्ववत जनों ने अपने विचार व्यक्त किये है।

दलित शब्द का शाब्दिक अर्थ ''उत्पीड़ित या टूटा हुआ'' इस शब्द ने ''अछूत'' शब्द की जगह ले ली है। ''रामचन्द्र वर्मा ने अपने शब्दकोश में दलित का अर्थ मसला हुआ, मर्दित, दबाया हुआ, रौंदा हुआ, अथवा कुचला हुआ बताया है।''1

''दलित का मतलब मानवीय अधिकारों से वंचित सामाजिक तौर पर जिसे नकारा गया हो।''2

दलित वर्ग का प्रयोग हिन्दु समाज व्यवस्था के अन्तर्गत परम्परागत रूप से शुद्र माने जाने वाले वर्गों के लिए रूढ़ हो गया है। दलित वर्ग में वे जातियां आ जाती है जो निम्न स्तर पर है और जिन्हें सदियों से सताया गया हो।3 सम्पूर्ण राष्ट्र में दलितों की स्थिति वैसी है जैसी की एक चतुष्पद की जिस प्रकार जानवर अपने खाने की वस्तु को जुटाने का प्रयासकरके ही वह अपना जन्म धन्य समझता है। ठीक उसी

प्रकार दलित भी केवल अपने खाने सम्बन्धी आवश्यकताओं को पूर्ण करता है, क्योंकि दलितों की कोई सामाजिक प्रतिष्ठा नहीं है।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात भी दलितों को वो मान-सम्मान नहीं मिला जो अन्य वर्गों को मिला है।

पौराणिक धर्म ग्रंथों का विश्लेषण करे तो हमें यह ज्ञात होता है कि यज्ञ, धर्म की शुद्धता व पवित्रता की धारणा इतनी तीव्र गति से हो रही थी जिससे दलितों को अपवित्रता को द्योतक माना साथ ही धर्म सम्बन्धी कार्यों से भी उनको वंचित रखा गया। इसमें शुद्रों को अस्पृश्य मानने लगे। अस्पृश्यता का सिलसिला वैदिक काल से चला आ रहा है।

वैदिक काल के अनुसार शुद्रों का स्थान निम्न माना गया है जिसका ऋग्वेद में पुरुष सुक्त या यक श्लोक प्रमाण है

''ब्राह्मणोस्य मुखमालीद बाह राजन्यः कृत
अरू तस्य यद्, वैश्या पद्मा शुद्रों अजापत।''4

अर्थात् ब्राह्मण पुरुष के मुख से राजन्य उनकी भुजाओं से वैश्य उनकी जांधों से और शुद्र की उत्पति उनके पैरों से हुई है। इसका अर्थ यह हुआ कि शिक्षा देने के लिए ब्राह्मणों की सृष्टि की, अपनी पूरी शक्ति से मानव की रक्षा करने के लिए क्षत्रियों की सृष्टि की गई। उदर शरीर के निचले भाग का प्रतीक है जिसमें भोजन पचता था। तात्पर्य यह है कि मनुष्यों की जठराग्नि शान्त करने के लिए वैश्यों की उत्पति हुई और पैरों से शुद्ध उत्पन्न हुए आदि पुरुष को सृष्टि या समस्त सामाजिक संगठन का प्रतीक माना गया है-5

''शुद्रो मनुष्याणामश्वः पशूनाः''6

अर्थात् शुद्र काले रंग के होते है। इसलिए वे यज्ञ करने के योग्य नहीं है।

प्राचीन काल में राजा-महाराजा सामन्ती व्यवस्था, तानाशाही व्यवस्था के चलते असंख्य बेगुनाह निर्दोश प्राणियों का शोषण सामंतवादी व्यवस्था, निर्धन, अल्पसंख्यक, दलित, विवश जनता को प्रताड़ित करते थे।

19 वीं शताब्दी के मध्य में जर्मनी के प्रसिद्ध विचारक काल मार्क्स का उदय हुआ। उन्होंने अपने विचारों में पीड़ित-शोषित जनता को समाज में जीने का उतना ही हक है जितना की उच्च वर्ग के लोगों का है। मार्क्स के अनुसार उत्पादन के साधन किसी एक व्यक्ति अथवा किसी विशेष वर्ण, संस्था के हाथ में न होकर समस्त समाज के संयुक्त अधिकार में होना चाहिए।

19वीं शताब्दी के क्रांतिकारी चिंतक और वर्णव्यवस्था को गम्भीर चुनौती देने वाले ज्योतिबा फूले ने दलितों के उत्थान के लिए जो कदम उठाएं उसकी तुलना किसी से नहीं की जा सकती। ज्योतिबा फूले हमेशा ही दलितों के पक्षधर रहे हैं। 1848 में इन्होंने शुद्र लड़कियों के लिए स्कूल की स्थापना कि आजकल जिन्हें दलित कहा जाता है। फूले साहब की लेखनी में उन्हें ''शुद्रादिशुद्र'' कहा गया। इन्होंने एक और क्रांतिकारी कदम उठाया और स्कूल की स्थापना के ठीक 9 साल बाद ''बम्बई विश्वविद्यालय की स्थापना की जिसका नतीजा यह हुआ कि इन्हें घर से बेघर कर दिया गया। फिर भी इन्होंने हार नहीं मानी और दलितों के उत्थान के लिए हमेशा तत्पर रहे।7

स्वतन्त्रता संग्राम के सर्वोच्च सेनानी, प्रबुद्ध शिक्षा शास्त्री, क्रांतिकारी विचारक और भारतीय राष्ट्र की कायाकल्प करके उसे आधुनिकता के मार्ग की ओर अग्रसर करने वाले सम्मानीय महात्मा गांधी भारतीय समाज की कोई एक भी ऐसा बड़ी समस्या नहीं जिस पर गांधी जी का ध्यान नहीं गया हो इन्होंने अस्पृश्यता निवारण दलितों द्वारा भी किया।

अस्पृश्यता के विरूद्ध जिस निष्ठा के साथ गांधी जी ने संघर्ष किया वैसा किसी और ने नहीं किया।

इसीलिए इन्होंने कहा है कि ''जब तक हिन्दु अपने भाइयों के एक भाग (अंश) को छुना पाप मानते रहेंगे तब तक स्वराज्य की प्राप्ति असम्भव है।''8

इसी संदर्भ में डॉ. अम्बेडकर को दलितों का मसिहा कहा जाता है। क्रांतिकारी सामाजिक चिंतन में डॉ. अम्बेडकर ने सर्वप्रथम वर्ण व्यवस्था और उसमें सम्मिलित विषमताओं एवं बुराइयों का विरोध किया बाबा साहेब ने कहा है कि गुणों की स्पर्धा एवं परिवर्तनशीलता की स्थिति बदलती रहती है तो मनुष्यों को स्थायी वर्णों में बांटना उनकी प्रकृति के विरूद्ध होगा। यह कतई सम्भव नहीं है कि व्यक्ति ताउम्र उसके व्यवहार में कोई परिवर्तन न आए।

अतः बाबा साहेब की दृष्टि से साख्यं दर्शन अथवा गीता यह सिद्ध करती है कि परिवर्तनशील प्रकृति से निर्मित मानव ब्राह्मण हो अथवा क्षत्रिय या वैश्व या फिर शुद्र ही बना रहेगा इन्हीं कारणों से उन्होंने चातुर्वण्य को अप्राकृति और व्यवहारिक बताया है।9

राजस्थान के हिन्दी उपन्यासों में दलित चेतना व व्यवहार की बात करें तो यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' के उपन्यासों को हम विस्मित नहीं कर सकते इन्होंने स्वयं सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक क्रुरताओं ओर अस्पृश्यता को व उनकी क्रुरताओं को बहुत नजदीक से देखा है। जिससे इनकी आत्मा आहत हुई है, इनके विचारों की लेखनी दलितों की आवाज बनकर उभरी है।

1. पत्थर के आंसू की कथा एक ऐसे दलित वर्ग के युवक के प्रतिशोध की कहानी है। जिसमें उसकी बहन कस्तुरी राजस्थान के कामांध व निरंकुश रजवाड़ों की कामवासना की बलि चढ़ जाती है। जिसका प्रतिशोध लेने के लिए दरसन डाकू बन जाता है और अजीत सिंह के पूरे खानदान को समाप्त कर देता है। तत्पश्चात पश्चाताप की अग्नि में जलते हुए उसके जीवन की इहलीला समाप्त हो जाती है। दलितों की स्त्रियों पर किये जाने वाले नृशंस एवं पैशाचिक व्यवहार का चित्रण किया गया है।
2. पेशे के आधार पर बनी दलित जातियों के शोषण व उत्पीड़न की गाथा 'चन्द्र' जी के ''हजार घोड़ों पर सवार'' उपन्यास के माध्यम से चित्रित की है उपन्यास का मुख्य पात्र गीधू दलित यूवक और सम्पूर्ण उपन्यास जातिगत, भेदभाव, छुआछूत, दलितों के रहन-सहन सामाजिक शोषण की मार्मिक गाथा है गिधू के लोकसभा सदस्य बनने के उपरान्त भी सवर्णो की विचारधारा में तनिक भी परिवर्तन नहीं हुआ है। गीधू के अपने गांव में ठाकुर उन्हें कुएं पर नहीं चढ़ने देते। गांव के हरिजन प्यासे मर रहे है। वह अपनी पत्नी जानकी से कहता है - अरे भाग्यवान, इस देश में गरीबों का कोई जीवन नहीं है। भंगिन सुगनड़ी को जमादार हमीद खा डंडे से इसलिए मारता है कि उसने ठाकुर के डेरे के पास कचरा डाल दिया था कारण यह था कि उसकी टोकरी ठाकुर के डेरे के पास टूट गई थी सामंती शासन में दलितों का कोई धणी-धोरी नहीं है, यह मानवीयता अत्यन्त क्रूर व असहनीय है।11
3. बहुरूपिया उपन्यास की दलित स्त्री मुसलकी सत्य को पूरी बहादूरी से सबके सामने उजागर कर देती है उसके पति को ठाकुर का लड़का इसलिए पिटता है कि उसने कुएं से पानी पी लिया और ठाकुर की दृष्टि में वह कुंआ अशुद्ध हो गया क्योंकि उसको दलितों ने छुआ। तब मूसलकी की ठाकुर के बेटे को फटकारती है और कहती है कि अपने उस खानदानी बाप को पूछ जो मेरे साथ सोता है और मेरे साथ क्या-क्या नहीं करता है ये सब करके क्यों वो नहाता है। गंगा जल पीता, गौ मुत्र पीता, तब कहां जाती है। छुत-अछुत की भावना। तू अपने उस बाप को इस तरह क्यों नहीं पीटता।''12
4. ठकुरानी ''साधुपुर'' प्रान्त का अच्छा खासा ठिकाना था दस लाख तक की सालाना आय थी। वहां का ठाकुर खीवसिंह अत्यन्त अन्यायी और ऐयाश था। दलितों को अपने पास तक नहीं फटकने देता था। उनको अपने पैरों की जुती समझता किन्तु दलितों की स्त्रियों संग रात गुजारने में उसे तनिक भी शर्म नहीं आती है। उनकी गरीबी का फायदा उठता है और उन्हें नारकीय यातनाएं भोगने के लिए बड़े-बड़े बुर्जों में अपनी दासियों द्वारा बन्द करवा देता है दो साल से सूखा पड़ रहा है सारे दलित किसान यह चाहते है कि इस बार का लगाम माफ कर दिया जाए किन्तु खींवसिंह इस के लिए बिल्कुल भी तैयार नहीं होता है और लगाम माफ करने के बजाय उनके कारीदें किसानों पर जुल्म करते है और सब तरह के लाग-बाग कर मांगते है यह अत्यन्त क्रूर, अमानवीय व असहनीय है।''
5. इसी तरह सामन्तों के अत्याचारों व उनकी कामुक वृतियों का खुलासा ''दीया जला : दीया बुझा'' में वासना और काम-क्रीडाओं का चित्रण खूले रूप में किया गया है। 'चन्द्र' जी ने सत्य घटनाओं के आधार पर कथा को प्रस्तुत किया है। ठाकुर जसवंत सिंह कामवासना में अन्धा होकर अपनी बेटी राधुड़ी को भी नहीं छोड़ता है। सच का पता चलने पर ही जसवंत सिंह उसका पिता है। वह आत्महत्या कर लेती है। राघुड़ी को बचपन में जसवंत सिंह बेटे की चाह में अन्धा होकर राघुड़ी को गांव के बाहर फिकवा देता है और जिसका पालन-पोषण रेवतियां नाई के घर होता है जब जसवंत सिंह को यह पता चलता है कि राघुड़ी उसकी बेटी है तो वह भी आत्महत्या कर लेता है। जसवंत सिंह ने आत्महत्या इसलिए की राघुड़ी में

उसका खून था। लेकिन गांव की वो हर बेटी जिसकी अस्मिता को उसने तार-तार कर दिया।''14

6. संघर्ष को चित्रित करने वाला एक मार्मिक और हृदयग्राही उपन्यास ''आखरी सांस तक'' जो मानवीय संवेदनशीलता को चित्रित करता हुआ दलित-जनों के हक की संघर्ष गाथा है। ''भोलिया'' (उपन्यास का नायक) उसे अपना अतीत याद आ गया उसकी आंखों में झांकता हुआ दर्द उसके अतीत से लिपटने लगा। कितना तिरस्कार भरा अतीत, पीड़ादायक वर्तमान। उसे याद है कि राजाओं के जमाने में गांव में उसे घंटों पानी के लिए तरसना पड़ता था, वे खास रास्ते से जा नहीं सकते थे, उनकी औरतें पांवों में गहना नहीं पहन सकती थी, पक्का मकान नहीं बना सकते थे। पंडित जीवराज तो भंगियों का जन्मजात दुश्मन था। भोलिया उस पिटायी की वेदना को आज भी नहीं भूला है। चोट लगने पर भोलिया जब वैद्य जी के पास जाता है तो वैद्य जी दूर से उसे कहते है कि कुंम-कुंम लगा ले और उसकी मरहम पट्टी नहीं करते क्योंकि वह एक दलित यूवक था।15 यह कैसी विडम्ना है क्या दलितों को अधिकार नहीं है। क्या वो जीवन पर्यन्त सामन्ती शासकों की जूति बने रहेंगे।
7. ढोलन कुंजकली नाम से प्रतीत होता है कि उपन्यास की नायिका ढोली जनजाति की है, रूपाली का घर कच्चा था। दीवारे पत्थर रखकर बनाई गई थी। आंगन राती मिट्टी के लेप से बना था। कमरों के नाम पर एक साल, एक ओरा, एक रसोई थी। एक मांची बिछी हुई थी। जिस पर रूपाली की 10 वर्षीय बेटी कूंजड़ी पेट में घुटने डालकर सोई हुई थी। हम गरीब ढोलिनें है। हमारा 'सत' कठिनता से रह सकता है?..... घर-घर मांगती फिरती है। अजगरों जैसे मरद औरतों की कमाई पर मजे लेते है। उनकी लुगाइयां सती नहीं हो सकती ढोलन रूपाली में सवर्ण औरतों की तरह जीने की लालसा थी। उसने ऐसा निर्णय भी कर लिया, किन्तु समाज की रूढ़ व्यवस्था ने उसे ढोलन की तरह जीने को मजबूर कर दिया।'' प्रेम के नाम पर रूपाली का सर्वस्व लुट गया।'' दलितों की बहु-बेटियों का यौवन, उनकी सुन्दरता, इनकी कमाई का प्रबल स्रोत होता है।'' कुजड़ी की जेठानी ..... सुन मेरी दिराणी ..... हम ढोली ने है। हमें तो पापी पेट के लिए गाना-नाचना ही पड़ेगा हमारी कोई लाज नहीं है।''16

समाज की इन स्थितियों को देखकर यह कहने में कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी की आज किसी भी वर्ग का खून एक दम पवित्र नहीं है ''सवर्णों के घरों में दलितों का खून खेल रहा है और दलितों के आंगन में सवर्णों का खून खेल रहा है।''17

यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' ने अपने उपन्यासों के माध्यम से समाज की मानसिकता बदलने का ईमानदारी से प्रयास किया है। उनके उपन्यासों में दलितों के दर्द को पूरी संवेदना के साथ महसूस किया जा सकता है। वे अपने उपन्यासों में ऐसे पात्रों की सृष्टि करते है। जो अन्याय, अत्याचार और शोषण के खिलाफ आवाज उठा सके ऐसे पात्रों में दरसन, अमोलक, गीधू, मुलसकी, राधुड़ी, भोलिया, ढोलन कुंजकली सभी अन्याय के खिलाफ आवाज उठाते है और नतीजन सामन्तों व ठाकुरों द्वारा यातनाएं सहते-सहते मौत को गले लगा लेते है। ''आदमी-आदमी को गुलाम बनाएं रखने वाली व्यवस्था को मिटा देना चाहिए। इस धरती पर मनुष्य व जीव जन्तु सब का बराबर अधिकार है। सब का जीने का अधिकारभी बराबर है। फिर वह दलित हो या फिर सुवर्ण 'चन्द्र' जी ने सुवर्ण की दोहरी मानसिकता को भी उजागर किया है। जाति के नाम पर छुआछुत करने वाले सामन्तों व ठाकुरों को सिर्फ अपना वर्चस्व स्थापित करने के लिए वे ऐसा करते है। उनको दलितों का देह शोषण करने में जरा भी परहेज नहीं है। हिन्दी का मुहावरा ''हाथी के दांत दिखाने के और होते है और खाने के और'' यह कथन उच्च वर्ग के लिए एकदम सटीक प्रतीत होता है। 'चन्द्र' जी दलितों के माध्यम से कहते है कि स्वार्थ भरी घटिया सत्ता ने वर्ण व्यवस्था की मूल बातों पर विचार न करके सब कुछ सतही ढंग में सुधार किए है। हर राजनीतिक पार्टी दलितों को सिर्फ वोट बैंक समझती है। उन्हें सुविधाएं तो बहुत मिली लेकिन समाज उनके प्रति अपनी सोच नहीं बदली। उनके जीने के ढंग को नहीं बदला, उनका रहन-सहन नहीं बदला आज भी उनके हिस्से में झुग्गी झोपड़ियां ही आती है क्यों इनको बार-बार यह एहसास दिलाया जाता है कि वे दलित है। मानवता के तकाजे के अनुसार वर्ण व्यवस्था को भी पहले ठीक ढंग से समझे और तद्नुरूप सभी के संग मानवीय व्यवहार करना हमारा पुनीत कर्तव्य बनता है। हमें

हमारी सोच में बदलाव लाना चाहिए। दलितों के प्रति सहानुभूमि ही नहीं अपितु सम्मान की दृष्टि से देखा जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ :

1. रामचन्द्र शर्मा, हिन्दी शब्द कोष, पृ. 220
2. डॉ. मुन्ना तिवारी : दलित चेतना और समकालीन हिन्दी उपन्यास
3. श्रीमती कुसुम मेघवाल - हिन्दी उपन्यासों में दलित वर्ग, भूमिका
4. ऋग्वेद-10, 12
5. ऋग्वेद - 10, 12
6. ऐतरेय ब्राह्मण - 5, 12
7. ज्योतिबा फूले - गुलाम गिरी, पृ. 22
8. द इण्डियन नेशनल कांग्रेस : 1920-1923, इलाहबाद
9. बी. आर. अम्बेडकर : बुद्ध एण्ड द फ्यूचर हिज रिलिजन, पेरा, पृ. 292
11. यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' : हजार घोड़ों पर सवार, पृ. 36
12. यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' : बहुरूपिया उपन्यास, पृ. 75
13. यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' : ठकुरानी उपन्यास, पृ. 10
14. यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' : दीया जला : दीया बुझा, पृ. 125
15. यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' : आखरी सांस तक, पृ. 17
16. यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' : ढोलन कुंजकली, पृ. 61, 72, 73
17. यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' : ढोलन कुंजकली, पृ. 82